लोकमाता अहिल्याबाई होलकर
एक गौरवशाली यात्रा

लेखक

डॉ. अनुराधा गुप्ता

डॉ. सत्यम रवि द्विवेदी

सुरुचि प्रकाशन

केशव कुंज, झण्डेवाला, नई दिल्ली - 110055

लोकमाता अहिल्याबाई होलकर : एक गौरवशाली यात्रा

डॉ. अनुराधा गुप्ता
डॉ. सत्यम रवि द्विवेदी
लोकमाता अहिल्याबाई होलकर अध्ययन केन्द्र, नई दिल्ली

प्रकाशक
सुरुचि प्रकाशन
(सुरुचि संस्थान न्यास)
केशव कुंज, झण्डेवाला,
नई दिल्ली - 110055
011-23514672, 8851358634
suruchiprakashan@gmail.com
www.suruchiprakashan.com

© सुरुचि प्रकाशन

प्रथम संस्करण : अगस्त, 2024
मूल्य : ₹ 00
आवरण एवं
पृष्ठ संयोजक : अमित कुमार
मुद्रक : क ख ग
ISBN : 000-00000-00-0

अध्ययन केंद्र का परिचय

लोकमाता अहिल्याबाई होलकर अध्ययन केंद्र की स्थापना, वर्ष प्रतिपदा अप्रैल 9 2024, के अवसर पर श्रीमान पंकज जी द्वारा ज्ञान के संभावनाशील क्षेत्रों में निरंतर अनुसंधान के महती उद्देश्य से दिल्ली में की गई। केंद्र के प्रतीक चिह्न में ष्सत्येन आपद्यते अमृतंष यानि सत्य से अमरत्व की प्राप्ति का भाव है। इस भाव से प्रेरित इस केंद्र का लक्ष्य राष्ट्रीय महत्त्व की विभूतियों, विशेष रूप से भारतीय महिलाओं, और राष्ट्रीय महत्व की घटनाओं के बारे में प्रासंगिक और सत्यनिष्ठ तत्वों को उजागर करना है। ये वे विभूतियां और घंटनाएं हैं जिन्हें मुख्यधारा के इतिहास में या तो अनदेखा किया गया या गलत तरह से प्रस्तुत कर भ्रमित किया गया । हम प्रामाणिक प्राथमिक स्रोतों पर आधारित गहन शोध के पश्चात, विभिन्न माध्यमों जैसे प्रिंट, कला, नाटक, सिनेमा और डिजिटल मीडिया के माध्यम से दर्शकों के सामने निष्पक्ष रूप से यह जानकारी रखने का प्रयास करते हैं। यह केंद्र ऐसे ऊर्जावान, प्रतिभाशाली और समर्पित शोधकर्ताओं को एक मंच प्रदान करता है जो भारत की ऐसी विभूतियों के योगदान के बारे में जागरूकता बढ़ाएं, और शोध कर उन्हें , देश की मुख्यधारा में लाएं।

प्रारम्भ से ही लोकमाता अहिल्याबाई का अनुसरणीय जीवन और व्यक्तित्व हमारी प्रेरणा थे। एक साधारण परिवार में जन्मी अहिल्याबाई, असाधारण परिस्थितियों के बीच होलकर राजवंश की शासिका बनीं। छोटी आयु में अपने पति की मृत्यु और फिर अपने पुत्र को खोने के बाद, उन्होंने दृढ़ता का परिचय देते हुए राज्य की कमान संभाली और तीस वर्षों तक मालवा प्रान्त के इतिहास में शांति और समृद्धि के नए अध्याय जोड़ दिए। उनके द्वारा किये गए मंदिरों के निर्माण और पुनर्निर्माण के कार्य से शायद ही कोई भारतीय अनभिज्ञ हो। सनातन के पुनर्जागरण में उनका

योगदान अतुलनीय है। लोकमाता अहिल्याबाई होलकर के सभी गुणों और उपलब्धियों का सम्मान करते हुए इस केंद्र का नाम लोकमाता अहिल्याबाई होलकर रखा गया।

यह केंद्र लोकमाता अहिल्याबाई होलकर से संबंधित विभिन्न आयामों पर कार्य कर रहा है, यह पुस्तक उन ही प्रयासों का एक अंश है

भूमिका

लोकमाता अहिल्याबाई होलकर एक पर्याय हैं सशक्त भारतीय स्त्री का तथा आदर्श व सक्षम शासिका का। वे भारतीय इतिहास का एक ऐसा चरित्र हैं जिनके सुशासन, न्याय प्रक्रिया, दूरदर्शिता, रणनीतियों, आर्थिक और व्यापारिक नीतियों, सादगी और सच्चरित्रता की मिसाल व अनुशंसा उनके समकालीन और बाद तक के लोग चाहे देशी हों या विदेशी, शत्रु हों या मित्र, जनता हो या राज्य की सीमा और कानून से बाहर अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ते कोल भील जैसी जनजातियाँ; मुक्त कंठ से करते रहे। यह बेहद आश्चर्य व खेद का विषय है कि ऐसे चरित्र को आधुनिक मुख्यधारा के इतिहासवेत्ताओं ने अपने पूर्वाग्रहों या दुराग्रहों से हाशिए पर डाल दिया।

इस संक्षिप्त पुस्तक के माध्यम से भारतवर्ष की इस महान रानी के जीवन और कार्यों को पाठकों के समक्ष रखने का एक छोटा सा प्रयास किया गया है। यह संक्षिप्त पुस्तक श्रीमान पंकज जी के मार्गदर्शन व प्रेरणा से लोकमाता अहिल्याबाई होलकर अध्ययन केंद्र, दिल्ली द्वारा लोकमाता पर किए गए अनुसंधान के फलस्वरूप प्राप्त परिणाम का एक संक्षिप्त हिस्सा है।

इस पुस्तक की रूपरेखा को तैयार करने में अध्ययन केंद्र के सह प्रमुख सत्यम जी का सहयोग सराहनीय रहा है। साथ ही हम आभारी हैं समय-समय पर सहयोग व उत्साहवर्द्धन करने वाले हमारे शुभचिंतक श्रेष्ठ जनों के; जिनकी शुभेच्छाएं हमारे लिए कठिन से कठिन मार्ग को सुगम बनाती गई।

लोकमाता का जीवन पूर्व की पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत

रहा है, आगे भी रहेगा। उनका जीवन संघर्ष के विषम रास्ते पर चलते हुए आदर्श का एक गौरवशाली उदाहरण स्थापित करता है। उनकी यह गौरवशाली यात्रा भारतीय इतिहास का एक स्वर्णिम अध्याय है।

डॉ. अनुराधा गुप्ता
प्रमुख
लोकमाता अहिल्याबाई होलकर अध्ययन केंद्र,
दिल्ली

लोकमाता अहिल्याबाई होलकर
एक संक्षिप्त परिचय

अठाहरवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध अर्थात उत्तर मध्यकाल का वह भारत जो मुक्ति और अस्तित्व की रक्षा के लिए निरंतर संघर्ष से गुजर रहा था। अब तक देश विदेशी आक्रांताओं से संघर्ष करते हुए तकरीबन हजार वर्ष से अधिक गुजार चुका था। यह वह समय था जब भारतीय राजनीतिक क्षितिज से मुगल शासकों के चरम उत्थान के बाद अद्योपतन होने लगता है और ब्रिटिश हुकूमत अपनी ताकत से अधिक अपनी चालाकियों और मक्कारियों से भारत में अपने पैर पसारने लगती है। सिर्फ राजनीतिक ही नहीं सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी यह समय संघर्ष का समय था। कई तरह की रूढ़ियाँ और अंधविश्वास अपनी जड़ें जमाने लगे थे। खासतौर पर स्त्रियों के लिए यह समय अपेक्षाकृत अधिक क्रूर और दमनकारी था।

लोकमाता अहिल्याबाई होलकर को समझने के लिए हमें आज से तीन शताब्दी पीछे अपने मानस में एक ग्रामीण धनगर जाति की बालिका को लाना पड़ेगा। धनगर वह भारतीय जाति है जो मुख्यत: महाराष्ट्र में निवास करती है, जिसका मुख्य पेशा भेड़, बकरियों को पालना है। 18 वीं सदी के पूर्वार्द्ध 31 मई 1725 में महाराष्ट्र के अहमद नगर जिले (वर्तमान में अहिल्या नगर) के चोंडी नामक ग्राम में मानको जी शिंदे व पत्नी सुशीला बाई शिंदे के घर इस तेजस्वी कन्या रत्न का जन्म हुआ। मानको जी उस गाँव के पटेल थे। वह आर्थिक रूप से समृद्ध नहीं थे लेकिन वह अच्छे नैतिक चरित्र, धर्मपरायण और सुसंस्कृत व्यवहार जैसे गुणों से समृद्ध थे। अपने नाम के अनुरूप ही अहिल्या बाई समस्त तरह के दोष से रहित थीं। अहिल्या एक सामान्य-सी ग्रामीण लड़की थी, सरल, सौम्य, सादगीपूर्ण जीवन जीने वाली एक सेवाभावी, जो अपने पिता के साथ मिलकर

घर के कार्य में हाथ बँटाती थी। बचपन से ही अहिल्या भगवान शंकर की श्रद्धा भाव से पूजा-अर्चना करती थी, कैसी भी कोई भी परिस्थिति हो गर्मी, सर्दी, आँधी, तूफान रोज का पक्का नियम था। किसी भी प्रकार से कोई भी महादेव की पूजा अर्चना से उसे कोई रोक नहीं सकता था। वास्तव में अहिल्या संतोष की जीती-जागती प्रतिमा थी। संतोष रूपी धन जिसके पास हो उसे कुछ माँगने की आवश्यकता भी नहीं रह जाती।

इंदौर के राजा होलकर रियासत के संस्थापक मल्हारराव होलकर पुणे जाते समय मार्ग में उसी शिवालय में ठहरते हैं, जहाँ प्रतिदिन अहिल्या भोले बाबा की पूजा करने आती थी। इस दृश्य का वर्णन अपनी पुस्तक महारानी अहिल्या देवी में करते हुए पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य लिखते हैं "इंदौर के महाराज मल्हारराव होलकर पूना जाते समय मार्ग में पाथडरी गाँव के उसी शिवालय में ठहरे, जिसमें अहिल्या नित्य पूजन करने आती थी। देवदूतों की प्रभात फेरी के समान अहिल्या पूजा करने आई। मंदिर के चारों ओर बड़ी चहल-पहल थी। हाथी, घोड़े, रथ और आदमियों की भीड़ ही भीड़ थी। किंतु अहिल्या बिना किसी ओर देखे- सत्पुरुषों के विचार की भाँति- अपने लक्ष्य मूर्ति-मंदिर की ओर, उपराम भाव से चलती गई। लोग मौन होते और मार्ग छोड़ते गए। कन्या ने नित्य की भाँति एकाग्र मन से यथावत पूजन किया और उसी अलिप्त भाव से वापस चली गई।" भारतवर्ष में एक लोकोक्ति प्रचलित है, "पूत के पाँव पालने में ही दिख जाते हैं।" अहिल्याबाई में छिपी संभावनाओं को मल्हार राव ने उसी समय समझ लिया हो, इसमें अतिशयोक्ति नहीं है।

इस समय अहिल्या बाई मात्र 8 वर्ष की थीं। प्रफुल्लित मन से महाराज इंदौर की ओर अहिल्या को लेकर चल दिए। पालकी सजी हुई थी अहिल्या जैसी थी वैसी ही उस पालकी में बिठा दी गई। सामान्य से परिवेश की ग्रामीण पृष्ठभूमि वाली, जिसने कभी राजमहलों को नहीं देखा था जो कभी अपने गाँव से भी बाहर नहीं निकली थी, वह इंदौर के राजघराने की युवरानी बन गई थी। बड़ी ही धूमधाम से

मल्हारराव होलकर के पुत्र खांडेराव का विवाह अहिल्याबाई के साथ हुआ। नवविवाहित जोड़े को आशीर्वाद देने के लिए पेशवा स्वयं अपनी पत्नी के साथ उपस्थित थे। ऐसी गुणी पुत्रवधू पाकर मल्हारराव अपने आप को भाग्यशाली महसूस कर रहे थे। अहिल्या का व्यक्तित्व उच्च प्रासाद में, भवनों में जाकर भी बदला नहीं। वह युवरानी बनने के बाद भी सादगी, शालीनता, विनम्रता, गंभीरता जैसे गुणों से अपने आप को नित्य निखारती हुई चली गई, महल में पहुँचकर भी अहंकार उसे लेश मात्र भी छू नहीं पाया।तुलसीदास जी मानस में लिखते हैं 'प्रभुता पाई, काहि मद नाहीं' अहिल्याबाई के संदर्भ में यह असत्य सिद्ध हुआ।

अंजान, अपरिचित अहिल्या, महल के वातावरण में समावेशी हो गई, उसका सादगीपूर्ण व्यवहार राजमहल के वातावरण के अंदर अद्‌भुत अनुशासन की वृद्धि करता चला गया, अहिल्या के सेवा भाव से उनके पति, सास, श्वसुर सब के मन में उनके लिए एक पवित्र स्थान बन गया, अहिल्याबाई ने धीरे-धीरे अपने आप को गरीबों, निर्धनों वंचितों की सेवा में लगा दिया। व्यक्तिगत रूप से जो भी उनको अपना खर्च मिलता उसे वह भूखों को भोजन करवाने, विधवाओं की सहायता तथा अन्य सत्कर्मों में खर्च कर देती थीं। इन सब कार्यों के कारण जनता में वे एक श्रद्धा की पात्र बन गईं।

गरीबी के कारण बालपन में अहिल्याबाई को विद्या अर्जन का अवसर नहीं मिला था। आगे चलकर उनके लिए विद्या अर्जन हेतु अलग से प्रबंध कर दिया गया था। वह बड़ी विनम्र भाव से एक छात्रा की तरह विद्या अर्जन करतीं, नियमों का पालन करतीं, गुरु के सम्मुख रानी नहीं अपितु एक सुशील छात्रा की तरह व्यवहार करतीं, इस व्यवहार से वृद्ध गुरु बड़े प्रभावित हुए, शीघ्र अहिल्याबाई विद्यावती बन गईं।

सेवा, सरलता, सादगी व निष्ठा से प्रभावित ससुर मल्हारराव होलकर ने अहिल्या को राजकाज की शिक्षा देनी भी प्रारंभ करवा दी। उनका अपनी पुत्रवधु के प्रति एक बहुत ही गहरा स्नेह और सम्मान था। राजमहल में रहते हुए अहिल्याबाई के मन में कोई भी विकार नहीं

आया, उनके व्यवहार से दिन-प्रतिदिन वह शासन-प्रशासन की कार्य प्रणाली सहज और सुगम हो गयी। अहिल्याबाई का स्वभाव पहले की भांति सौम्य, सरल बना रहा। वह हर प्रकार के विषयों में पारंगत होती जा रही थीं। जब कभी पति, श्वसुर बाहर जाते तो राजकाज का सारा कार्य उनको सौंप जाते, वह पूरी तन्मयता के साथ राजकाज के सारे काम संपन्न करतीं, किसी काम को टालती नहीं, विलंब नहीं करतीं, काम कैसा भी हो छोटा हो या बड़ा, शालीनता के साथ कार्य पूरा करतीं। अहिल्याबाई शासन-प्रशासन के सभी कार्यों में दक्ष होती चली गई और मल्हारराव का विश्वास दिनों दिन उस पर बढ़ता चला गया। अहिल्याबाई प्रतिदिन सुबह जल्दी उठकर दैनिक कार्यों को निपटा अपना दिन घरेलू कामों और अपनी सास गौतमाबाई और पिता तुल्य श्वसुर की सेवा में बितातीं। सन् 1745 ई. में उन्होंने देपालपुर नामक स्थान पर एक पुत्र को जन्म दिया राजकुमार के जन्म पर पूरे राज्य में खुशी की लहर दौड़ गई। बेटे का नाम 'मालेराव' रखा गया। तीन साल बाद सन् 1748 ई. में अहिल्याबाई ने एक कन्या को जन्म दिया उसका नाम 'मुक्ताबाई' रखा गया।

अहिल्याबाई को बार-बार अनेक परीक्षाओं से गुजरना पड़ा। जीवन में जिसने प्रेम किया वह सब दूर होते चले गए। सन् 1754 ई. में खाण्डेराव, मल्हारराव के साथ थे। जब उन्होंने रघुनाथ राव पेशवा के साथ चौथ (भूमि कर) वसूलने के लिए राजपूताना का दौरा किया। उन्होंने राजपूतों की अधिकांश रियासतों से चौथ की वसूली सफलतापूर्वक कर ली, लेकिन भरतपुर के राजा सूरजमल जाट ने चौथ कर देने से साफ इनकार कर दिया। जब सभी अनुनय भी विफल हुए तो युद्ध की घोषणा करनी पड़ी। भरतपुर रियासत में डीग के पास कुम्हेर के किले पर हमला बोला गया और भयंकर युद्ध हुआ। 24 मार्च सन् 1754 ई. को उनके पति खांडेराव युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। अहिल्याबाई के जीवन में यह एक बड़ी त्रासदी थी।

सन् 1754 ई. में उनके पति खांडेराव वीरगति को प्राप्त होने के बाद मात्र 29 वर्ष की अल्पायु में अहिल्याबाई विधवा हो गईं,

तत्कालीन प्रथा के अनुसार अहिल्याबाई अपने मृत पति की, चिता के साथ सती होने की तैयारी करने लगी। लोग उनकी योग्यता और कार्य कुशलता से बहुत प्रभावित थे। वह ऐसी योग्य रानी को खोना नहीं चाहते थे। लोगों ने उनसे अपने पति की चिता के साथ सती न होने का अनुरोध किया, लोगों के अनुरोध का अहिल्याबाई पर कोई असर नहीं हुआ। उनके श्वसुर मल्हारराव उनको समझाने के लिए स्वयं आगे आए, – "अहिल्या मैंने हमेशा तुम्हें अपनी बेटी माना है, तुम सती होने की बात मत बोलो, मैं तुमसे विनती करता हूँ। इतना कहकर मल्हार राव फूट-फूट कर रोने लगे"। इस स्थिति को देखकर आखिरकार अहिल्याबाई ने अपना निर्णय बदल दिया।

मल्हारराव के जीवनकाल में ही उनके पुत्र खांडेराव का निधन हो गया था। अतः मल्हारराव के निधन के बाद उनके पौत्र मालेराव होलकर को उत्तराधिकारी बनाया गया, उनकी कम उम्र होने के कारण रानी अहिल्याबाई उनकी संरक्षिका बनकर रहीं। लेकिन असमय पुत्र भी काल का ग्रास हो गया। मालेराव होलकर की मृत्यु के बाद देवी अहिल्याबाई ने सन् 1767 ई. में पेशवा की अनुमति से प्रशासन का कार्यभार संभाला और तुकोजीराव को सूबेदार नियुक्त किया। रानी अहिल्याबाई अपनी राजधानी को इंदौर से महेश्वर ले गईं।

जब अहिल्याबाई की आयु बासठ वर्ष के लगभग थी, उनका दौहित्र चल बसा। चार वर्ष बाद इस आघात को न सह सकने के कारण लंबी अस्वस्थता के बाद दामाद यशवन्तराव फणसे भी इस दुनिया से विदा ले गए और इनकी पुत्री मुक्ताबाई अहिल्याबाई के द्वारा भरसक समझाए जाने व अनुनय के बावजूद सती हो गई। जीवन के उत्तरार्द्ध में अपने प्रिय दौहित्र, पुत्री व दामाद को असमय खो देना वज्राघात से कम न था। वे एक कमरे में बंद हो गई, तीन दिन तक कुछ न खाया। अपने उपन्यास अहिल्याबाई में वृंदावन लाल वर्मा लिखते हैं – "अहिल्याबाई के सामने अंधेरा छा गया। चारों ओर शून्य। बाहर-भीतर सब जगह शून्य। इस अवस्था में वह काफी देर तक रहीं। जब वह अंधेरा छंटा, दो दिन से ऊपर हो गए थे। तीसरे दिन वह बाहर

निकलने को हुंई। उन्हे स्पष्ट सूझा – जब जीवन में कोई और आनंद उपलब्ध न हो तब धर्मानुचरण और कर्त्तव्यपालन ही चित्त को शांति दे सकता है; तरह–तरह के भय मानव को घेरे हुए हैं, अंधविश्वासों को भय ही जन्म देता है, मैं सब प्रकार के भय से लड़ूंगी।" अपने जीवन काल में अपनी आंखों के सामने अपने सभी इष्ट जन को दुनिया से विदा करते हुए लोकमाता के हृदय ने किस आघात और असहनीय पीड़ा को झेला होगा, इसकी कल्पना भी रोम रोम को सिहरा देने वाली है। इन सब असहनीय आघातों के बावजूद लोकमाता अपने कर्त्तव्य पथ से विचलित न हुई। उनके पास धरती सा धैर्य, हिमालय सी दृढ़ता, आकाश सा विस्तार और उदारता थी।

अहिल्याबाई को एक बुद्धिमान, तीक्ष्ण सोच और साहसी शासिका के रूप में याद किया जाता है। हर दिन वह अपनी प्रजा से बात करती थीं। उनकी समस्याएँ सुनती थीं। अपने प्रशासनिक कालखंड (सन् 1767 ई. से सन् 1795 ई.) में रानी अहिल्याबाई ने कई ऐसे कार्य किए जिनकी स्वर्णिम स्मृतियाँ आज भी लोगों के हृदय में जीवित हैं और उनका नाम लेते हैं।

अहिल्याबाई के समकालीन, नाना फडनवीस, मराठा साम्राज्य के दौर में पेशवा के दरबार में प्रमुख मंत्री, उनके बारे में कहते हैं कि "वो जितनी शक्ति आशीष की रखती थीं उतनी ही शक्ति भस्म करने की भी।"

लगभग 1000 वर्ष संघर्ष के वर्ष थे। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक अस्थिरता और दमन, आम भारतीय में निराशा और क्षोभ के साथ बदलाव के लिए उत्कट तड़प पैदा करती जा रही थी। लंबे काल से चला आता दमन और शोषण उनके आत्मबल को क्षीण और दुर्बल बनाता जा रहा था। कोटि–कोटि निगाहें किसी नेतृत्व और उद्धारक की आस में टकटकी लगाए हुई थीं। जातीय गौरव और अस्मिता के सम्मान तथा रक्षा के लिए शिवाजी और सिक्ख गुरु अदम्य साहस व वीरता के प्रतीक रूप में सामने आए, जिन्होंने भारतीयों के भीतर उम्मीद की एक नई लहर पैदा की, बावजूद इसके मंजिल अभी

भी दूर थी। एक ऐसा दौर जिसे अंधकार युग कहा जाता है, यह कल्पना मुश्किल नहीं कि संघर्ष कितना बहुआयामी और जटिल रहा होगा। इस समय तक भारतवर्ष में कई सामाजिक रूढ़ियाँ भी अपनी जड़ें जमाती जा रही थीं। अशिक्षा, अंधविश्वास, सामाजिक जड़ रूढ़ियों में स्त्रियों का अपने स्वत्व के साथ संघर्ष में उतरना एक और बड़ी चुनौती थी। स्त्रियों के लिए यह संघर्ष और कई गुना मुश्किल था। उनकी लड़ाई सिर्फ बाहरी ताकतों से ही नहीं, भीतरी प्रतिगामी शक्तियों से भी थी। लोकमाता अहिल्याबाई की प्रखर मेधा, सूझ-बूझ, दूरदर्शिता और राजनयिक क्षमता का उदाहरण निम्न उद्धृत उनके पत्र से देखा जा सकता है, जिसे उन्होंने पेशवा को ब्रिटिशर्स से सावधान कराते हुए लिखा था... जिसका जिक्र "जॉन के" (John Key) की अपनी पुस्तक 'इंडिया ए हिस्ट्री' में करते हैं, जहाँ वे उन्हें 'दार्शनिक रानी' की संज्ञा से संबोधित करते हैं।

'अन्य जानवरों, जैसे बाघ, को शक्ति या युक्ति से मारा जा सकता है, लेकिन भालू को मारना बहुत कठिन है। उसे केवल तभी मारा जा सकता है जब आप उसे सीधे चेहरे पर मारें, अन्यथा, एक बार उसकी शक्तिशाली पकड़ में आ जाने पर, भालू अपने शिकार को गुदगुदी करके मार देगा। ऐसा ही अंग्रेजों का तरीका है। और इस दृष्टिकोण से, उनके ऊपर विजय पाना कठिन है।

जॉन के, इंडिया: ए हिस्ट्री (2000)

राजव्यवस्था एवं अर्थव्यवस्था

लोकमाता अहिल्याबाई को पेशवा और पड़ोसी राज्यों से पर्याप्त सैन्य समर्थन प्राप्त था। अपने राज्याभिषेक के बाद सुगम नागरिक व्यवस्था को सुनिश्चित करने के लिए उन्होंने 'सरंजामी व्यवस्था'[1] में

1. **सरंजामी व्यवस्था** – सरंजाम भू-राजस्व प्रथा थी जोकि जागीर (सामंती संपत्ति) प्रणाली का एक रूप हो सकती है। यह सैन्य सेवा के लिए भूमि अनुदान का ही नाम था।

सुधार किए। अहिल्याबाई को 18 सरदारों का समर्थन प्राप्त था जो उनके दरबार के प्रति वफादार थे। इन सरदारों और जागीरदारों से दरबार को 32,57,000 रुपये की वार्षिक आय होती थी। महारानी का अपने सरदारों के प्रति बुद्धिमत्तापूर्ण व्यवहार था। एक ओर जहाँ वे उनका यथोचित सम्मान करती थीं, वहीं दूसरी ओर वह उनके प्रशासन पर पैनी नजर भी रखती थीं और आवश्यकता पड़ने पर शीघ्र हस्तक्षेप करती थीं। इसके अतिरिक्त वह पेशवा द्वारा रखी गई किसी भी अव्यावहारिक माँग से अपने सरदारों की रक्षा भी करती थीं। ऐसी ही एक घटना में, जब पेशवा के दरबार ने सरंजमियों की परिषद को युद्ध निधि में योगदान देने का आदेश जारी किया, तब रानी अहिल्याबाई ने दूसरे कर की अतार्किक माँग को पूरा करने में अपने सरदारों के सामने आने वाली कठिनाइयों की ओर इशारा करते हुए पेशवा दरबार को साहसपूर्ण जवाब दिया। उन्होंने पेशवा के दरबार को सरदारों की संतुष्टि में खलल न डालने की सलाह दी और बातचीत द्वारा 'कर' राशि में बहुत जरूरी छूट हासिल की।

लोकमाता अहिल्याबाई ने सरंजमी सरदारों के अतिरिक्त कुछ विश्वसनीय सलाहकारों की सहायता से शासन किया, जिन्होंने उनके प्रशासन के विभिन्न विभागों की कुशलतापूर्वक देखभाल की। अपने समकालीन राजाओं से पृथक, मालवा दरबार में पूर्ण मंत्रिमंडल नहीं था जो अपने समय के लिए असाधारण था। इसके बजाय, महारानी ने उन लोगों की सेवाएँ लीं जिन्हें उन्होंने सावधानीपूर्वक निरीक्षण और विचार-विमर्श के बाद चुना था। यह लोग न केवल उनके प्रति वफादार थे, बल्कि राज्य के दैनिक मामलों के प्रबंधन में उच्च स्तर की क्षमता भी प्रदर्शित करते थे।

सूबेदार मल्हारराव के शासनकाल में मालवा का वार्षिक राजस्व पचहत्तर लाख रुपये बताया जाता है। देवी अहिल्याबाई के शासनकाल में यह आँकड़ा बढ़कर एक करोड़, पाँच लाख और सैंतीस हजार हो गया था। वार्षिक राजस्व में इतनी उल्लेखनीय वृद्धि, महेश्वर को एक वित्तीय महाशक्ति के रूप में स्थापित करने में देवी की सफलता को

प्रदर्शित करता है। उनके शासनकाल में इस क्षेत्र में लंबे समय तक शांति और समृद्धि रही, जिसके परिणामस्वरूप राज्य के राजस्व में वृद्धि हुई। उस समय जब मालवा के पड़ोसी राज्य- राजपूताना, बुन्देलखण्ड और बंगाल के कुछ हिस्से लगातार अकाल के कारण संकट का सामना कर रहे थे, मालवा के लोगों के पास भरण-पोषण के लिए पर्याप्त मात्रा में खाद्य सामग्री थी। ऐसा रानी की दूरदर्शितापूर्ण एवं विवेकपूर्ण नीति निर्धारण द्वारा संभव हुआ।

मालवा के सरंजमी सरदारों के साथ उनके सौहार्दपूर्ण संबंधों ने राजकोष में 'कर' के एक स्थिर प्रवाह को सुनिश्चित किया जिसने उनके कुशल प्रशासन की नींव बनाई। उन्होंने 'राजकोष न्यायालय' के नाम से एक विस्तृत व्यवस्था की स्थापना की, जिसमें विभिन्न कमाविसदारों[2], कारभरियों[3] और सलाहकारों को शामिल किया गया। ताकि संसाधनों का उचित उद्देश्य के लिए समुचित मार्ग सुनिश्चित किया जा सके। कोषागार विभाग; प्रशासन के नागरिक और सैन्य दोनों पहलुओं की देखभाल करता था। इसके अतिरिक्त, उनके राज्य और पूरे भारतवर्ष में रानी द्वारा किए गए विभिन्न धर्मार्थ कार्यों के संचालन और निगरानी के लिए एक समर्पित प्रणाली स्थापित की गई थी।

उन्होंने व्यवासियों और साहूकारों को एक सुरक्षित वातावरण प्रदान किया क्योंकि राज्य के व्यवसाय की भलाई में उनकी गहरी रुचि थी। वह कभी भी अतिरिक्त कर लगाने के पक्ष में नहीं थीं, जिसकी व्यापार और व्यापारिक समुदाय द्वारा अत्यधिक प्रशंसा की गई थी। जहाँ बुंदेलखंड की हीरा खदानों को पेशवा द्वारा दी गई रियायतों से लाभ हुआ, वहीं

---

2. **कमाविसदार** - छोटे डिवीजनों (विभागों) के प्रभारी/मासिक एवं वसूली करने प्रत्येक गाँव का दौरा करने, गौंटिया से कृषि संबंधी जानकारी प्राप्त करना। पारिश्रमिक, परगने से प्राप्त होने वाले राजस्व का डेढ़ प्रतिशत मिलता है।
3. **कारभारी** - एक ऐसा व्यक्ति जो किसी कार्य या कार्यालय का प्रमुख होता है या जिम्मेदार होता है। इसे प्रमुख या अधिकारी के रूप में भी समझा जा सकता है।

अरब के हीरा व्यापारियों को स्थानीय प्रशासन द्वारा इस क्षेत्र में बसने और अपने व्यापार का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। आवश्यक अनाज की वार्षिक आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए, राज्य द्वारा किसी भी भ्रष्टाचार को खत्म करने के लिए बड़ी भंडारण सुविधाओं की व्यवस्था की गयी। उनकी आर्थिक नीतियों का उद्देश्य आंतरिक संघर्षों को हल करना, शांति बनाए रखना और स्थानीय कारीगरों और श्रमिकों को अवसर प्रदान करना था। उनके शासनकाल के दौरान ही भील और गोण्ड समुदायों द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी समर्थित शासकों के प्रतिरोध के मामले उजागर होने लगे थे, जिस से मालवा प्रान्त की सीमाओं पर अराजकता का माहौल बन गया था। महारानी अहिल्याबाई ने भील और गोण्ड समुदायों के नेताओं से वार्तालाप के बाद न केवल उन्हें अपनी भूमि पर अधिकार दिए, बल्कि उन्हें अपने क्षेत्रों को पार करने वाले यात्रियों की सुरक्षा का प्रभारी बनाया, जिसके लिए उन्हें शुल्क लेने की अनुमति दी गई। आदेश की अवज्ञा करने पर दोषी पाए गए लोगों को कारावास में डाला गया, लेकिन ऐसे मामले दुर्लभ थे। उन्होंने मांडू और सूरत के बुनकरों को महेश्वर में बसने और उन्हें राज्य से विभिन्न लाभ प्रदान करके अपनी कला को निखारने के लिए प्रोत्साहित किया। इन बुनकरों को महेश्वर किले के नीचे अपना अलग पैठ दिया गया जिसे राज्य द्वारा संरक्षण प्राप्त था। परिणामस्वरूप, महेश्वर वस्त्र उद्योग और महेश्वरी सिल्क साड़ी का विकास हुआ जो पूरे भारतवर्ष में आज भी लोकप्रिय है।

न्याय व्यवस्था और लोक कल्याण

लोकमाता अहिल्याबाई को एक न्यायप्रिय और परोपकारी शासक के रूप में याद किया जाता है। वह अपनी बुद्धिमत्ता, दयालुता और अपनी प्रजा के कल्याण के लिए जानी जाती थीं, चाहे प्रजा की पृष्ठभूमि कुछ भी हो। उनके शासनकाल में न्याय शीघ्र और निष्पक्ष रूप से दिया जाता था। अहिल्याबाई यह सुनिश्चित करने में विश्वास रखती थीं

कि हाशिए पर रहने वाले समुदायों को भी समान न्याय मिले। उन्होंने योग्य प्रशासकों के साथ शासन की एक सुव्यवस्थित प्रणाली स्थापित की, जिन्हें पक्षपात के बजाय योग्यता के आधार पर नियुक्त किया गया था। दया, क्षमा और परोपकार को प्राथमिकता दी जाती थी और कठोर कार्यवाही केवल गंभीर अपराधों के लिए ही आरक्षित थी।

अहिल्याबाई का दरबार सभी के लिए सुलभ था। आपसी विवाद के मामलों में उनकी प्रजा सीधे उनके पास जाकर न्याय की गुहार लगा सकती थी। ऐसे कई अवसर आए जब उन्होंने उस समय की प्रचलित प्रथाओं के विरुद्ध जाकर जरूरतमंदों की मदद की। ऐसा ही एक उदाहरण है, जब सूबेदार तुकोजी होलकर अपनी सेना सहित इंदौर के पास डेरा डाले हुए थे, जहां वे दव्यचंद नामक एक धनी बैंकर की संपत्ति में जबरन हिस्सा लेना चाहते थे, क्योंकि वह नि:संतान था। इसकी जानकारी मिलते ही, मृतक की चिंतित पत्नी महेश्वर पहुँची और रानी अहिल्याबाई के समक्ष अपनी व्यथा सुनाई। विधवा ने बताया कि उसके पति की अंतिम इच्छा के अनुसार, वह संपत्ति की एकमात्र मालिक है और रानी से हस्तक्षेप करने की प्रार्थना की। उस काल में किसी सेनापति के लिए बिना किसी उत्तराधिकारी के मृतक की संपत्ति में हिस्सा लेना एक आम बात थी, परन्तु लोकमाता ने तेजी से कार्रवाई की और तुकोजी को इंदौर की सीमाओं से तुरंत पीछे हटने और विधवा को अकेला छोड़ने का तत्काल आदेश भेजा। ऐसा करके, उन्होंने न केवल विधवा की याचिका पर तत्काल ध्यान दिया, बल्कि अपने विश्वसनीय सूबेदार तुकोजी राव को फटकार भी लगाई। यह घटना देवी के न्याय की सुलभ और त्वरित स्वभाव को दर्शाती है जहाँ मानवाधिकारों को परंपरा से अधिक महत्व दिया जाता था।

उनकी कार्य प्रणाली बहुत सहज और प्रजा के लिए उत्साहवर्धक होती थी। वह जन कल्याण और सामाजिक समरसता के लिए प्रतिबद्ध थीं। जनता को दैनिक आधार पर राहत प्रदान करने के लिए नियमित रूप से व्यवस्था की जाती थी। सार्वजनिक कुओं, गौशालाओं के निर्माण, मंदिरों के जीर्णोद्धार, स्थानीय बाजारों के संचालन और रखरखाव

के लिए और ब्राह्मणों, पुजारियों, शिल्पकारों, कवियों, संगीतकारों आदि के लिए नियमित रूप से धन जारी किया जाता था।

लोकमाता के शासन में समानता ही नहीं, बल्कि समता भी बनी रही। सभी धर्मों को मानने वालों के अधिकारों और विश्वासों पर समान ध्यान दिया गया। इसे एक घटना से समझा जा सकता है; एक स्थानीय फकीर-तर्शन अवलिया ने रानी से अनुरोध किया कि उन्हें स्थानीय पीर-नाहर सैयद की इबादत के लिए लगभग 15 बीघा (2 हेक्टेयर) भूमि दी जाए। उन्होंने अनुरोध को स्वीकार किया और फकीर को इतनी भूमि ईनाम के रूप में प्रदान की। इसी तरह की एक अन्य कार्रवाई में, शाह सफी पीरजादा हैदराबादकर को दैनिक भरण-पोषण और रखरखाव के लिए एक हजार रुपये अनुदान के रूप में दिए गए। इस प्रकार, उनके शासन में लोककल्याण का दायरा और परोपकार का दृष्टिकोण, दोनों ही व्यापक थे जिसका लाभ सभी नागरिकों को समान रूप से मिलता था।

राज्य की शासक के रूप में, रानी ने सादगी, सरलता और संयम का जीवन व्यतीत किया। किसी भी प्रकार की चापलूसी और आत्म-प्रशंसा को वह पसंद नहीं करती थीं, जैसा कि एक ब्राह्मण कवि की घटना से स्पष्ट होता है, जिसने लोकमाता को उन्हीं की प्रशंसा में लिखी गई कविताओं की एक पुस्तक भेंट की थी। लोकमाता अहिल्याबाई ने धैर्यपूर्वक पुस्तक पढ़ी, लेकिन समाप्त होने के बाद, उन्होंने कवि को सख्ती से कहा कि वह फिर कभी ऐसी रचना न करे और पुस्तक को नर्मदा में फेंकने का आदेश दिया। व्यक्तिगत खर्चों के मामले में, वह अनुशासित और ईमानदार थीं। इन खर्चों के लिए वह राजकोष से धन नहीं लेती थीं। व्यक्तिगत उपहारों को वह पसंद नहीं करती थीं एवं दरबारियों द्वारा उनके मामलों के लिए किए गए किसी भी खर्च को विधिवत वापस करती थीं। बीजागढ़ के एक कमाविसदार- पांडुरंग नारायण ने रानी की ओंकारेश्वर तीर्थयात्रा के दौरान खरीदी गई कुछ वस्तुओं का भुगतान किया। राजधानी लौटने पर, उन्होंने एक पत्र के माध्यम से निर्देश दिया कि खर्च की गई राशि 58 रुपये को उनके

नाम से खाते में डाल दें और कोषाध्यक्ष को जल्द ही राशि का भुगतान करने का आदेश दिया। इससे पता चलता है कि रानी उनके नाम पर किए गए छोटे-छोटे खर्चों को भी लौटाने पर ध्यान देती थीं।

कूटनीति एवं युद्धनीति

अहिल्याबाई का राज्याभिषेक भारतीय इतिहास के एक महत्वपूर्ण अध्याय के रूप में देखा जा सकता है। जिन विषम परिस्थितियों में उन्होंने सिंहासन ग्रहण किया और तत्पश्चात प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करते हुए मालवा की महारानी के रूप में उभरी, वह एक असाधारण उपलब्धि है जिसका पर्याय हमें भारतीय इतिहास में नहीं मिलता। उनका शासनकाल व्यापक रूप से शांति और समृद्धि का काल माना जाता है जो उनकी कुशल राजनीति और कूटनीति का प्रमाण है। उनके राजतिलक का विरोध एक महत्त्वपूर्ण घटना है जो हमें अहिल्याबाई की वीरता और दृढ़ता की पहचान कराता है। उनके शासन काल में उनकी नीतियों और कुशल शासन की वजह से यूँ तो प्रायः शांति रही किंतु जब-जब भीतर या बाहर के विद्रोहियों के द्वारा युद्ध की स्थिति पैदा की गई जिसका उन्होंने मुंहतोड़ जवाब दिया। उनके शासनकाल में दो युद्धों का जिक्र आता है जिनका सामना उन्होंने अत्यंत साहस और सूझबूझ से किया।

मालेराव की मृत्यु के बाद, राज्य के कुछ लोगों को एक विधवा का राज्य की गद्दी पर बैठना स्वीकार्य नहीं था, वह इसे शास्त्रों के विरुद्ध मानते थे। राज्य के दीवान गंगाधर यशवंत चंद्रचूड़, जो लोकमाता के वफादार थे, वह भी उनके खिलाफ हो गए। उन्होंने उन्हें एक पुत्र को गोद लेकर नया सूबेदार बनाने की सलाह दी, जिससे प्रशासन उनके हाथ में आ जाता। लेकिन वे उनकी चतुर कूटनीति को समझ गईं। उन्होंने राज्य का नियंत्रण अपने हाथ में लेने की घोषणा की, क्योंकि लोग जानते थे कि वह एक निःस्वार्थ, परोपकारी, न्यायप्रिय और धार्मिक शासिका थीं। उन्होंने प्रजा के हित के लिए राज्य का

प्रशासन संभाला। अहिल्याबाई को गंगाधर पंत द्वारा राघोबा को गुप्त रूप से लिखे गए पत्र और राघोबा की पचास हजार की सेना के इंदौर की ओर कूच की जानकारी पहले से ही थी। इस अचानक आई विपत्ति से बिना घबराए रानी अहिल्याबाई ने साहस दिखाते हुए, उनकी कुत्सित योजनाओं को नष्ट करने का संकल्प लिया। उन्होंने स्पष्ट किया कि वह एक कमजोर विधवा नहीं हैं और किसी भी चुनौती का सामना करने के लिए तैयार हैं।

उन्होंने पाँच सौ महिलाओं की सेना तैयार की, उन्हें कठोर प्रशिक्षण दिया, हथियारों से सुसज्जित किया और आवश्यक रसद जुटाई। राघोबा के क्षिप्रा नदी के तट पर शिविर स्थापित करने की खबर मिलने पर, उन्होंने अपनी सेना के साथ युद्ध के मैदान में उतरने का निश्चय किया। इस बीच अहिल्याबाई ने राघोबा को एक पत्र लिखा। जिसमें उन्होंने लिखा था, *"तुम मेरे राज्य को हड़पने के बुरे इरादे से यहाँ आए हो। तुम सोचते हो कि मैं एक कमजोर महिला हूँ। लेकिन तुम्हें युद्ध के मैदान में मेरी ताकत का पता चल जाएगा। मैं अपनी नारी शक्ति से तुम्हारा मुकाबला करूँगी। यदि मैं हार गई तो कोई मेरा उपहास नहीं करेगा, लेकिन यदि तुम हार गए तो तुम कहीं भी मुँह दिखाने लायक नहीं रहोगे। युद्ध के मैदान में उतरने से पहले इन सभी बातों पर विस्तार से विचार कर लेना।"* अहिल्याबाई के इस स्पष्ट और दृढ़ संदेश ने युद्ध के प्रति उत्साहित राघोबा की तीव्रता को कम कर दिया तब उन्होंने अपने सेनापति तुकोजीराव को स्थिति से अवगत कराया और उन्हें राज्य की सुरक्षा के लिए तुरंत इंदौर पहुँचने का निर्देश दिया। इसके बाद उन्होंने महादजी सिंधिया, भोंसले, गायकवाड़, दभरे और अन्य सेनापतियों को पत्र भेजकर अपने सामने आने वाली आपात स्थिति के बारे में बताया, उन्हें अपने श्वसुर स्वर्गीय मल्हारराव द्वारा की गई सेवाओं और सहायता की याद दिलाई और उनसे उस कठिन समय में होलकर राज्य की मदद के लिए आगे आने का अनुरोध किया। जवाब में, सभी सेनापतियों ने स्वर्गीय मल्हारराव के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त की और उन्हें अपने पूर्ण सहयोग का

आश्वासन दिया। श्रीमंत माधवराव पेशवा को लिखे पत्र में अहिल्याबाई ने उन्हें बताया कि गंगाधर पंत ने राघोबा के साथ मिलकर उनका राज्य हड़पने के लिए षड्यंत्र रचा था। माधवरावपेशवा स्वयं एक न्यायप्रिय और धर्मनिष्ठ शासक थे। वह अपने चाचा की मानसिकता को भली-भाँति जानते थे। अहिल्याबाई को उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा, *"यदि कोई अन्यायपूर्ण रूप से तुम्हारे राज्य पर आक्रमण करता है, तो तुम्हें उसके खिलाफ उठना और उसे प्रतिबंधित करना चाहिए। होलकर राज्य का प्रबंध तुम्हारा अधिकार है। हम तुम्हारे साथ हैं और तुम्हें पूर्ण समर्थन प्रदान करेंगे।"*

राघोबा ने रणनीति बदलते हुए, तुकोजी राव को एक पत्र भेजा कि – *"आप हमें गलत समझ रहे हैं कि हम होलकर साम्राज्य पर हमला करने आए हैं। स्वर्गीय मल्हारराव के साथ हमारे पिछले संबंधों को देखते हुए, हम उनकी बेटी के खिलाफ लड़ने की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। वास्तव में, हम देवी अहिल्याबाई के पुत्र स्वर्गीय मालेराव की मृत्यु पर अपनी संवेदना व्यक्त करने आए हैं।"* अहिल्याबाई ने तुरंत उत्तर भेजा, *"केवल संवेदना व्यक्त करने के लिए आपको इतनी बड़ी सेना के साथ आने की आवश्यकता नहीं थी। सेना को वहीं छोड़ दें, और इंदौर आएँ, हम आपका पूरा सम्मान करेंगे।"*

राघोबा ने रानी अहिल्याबाई के खिलाफ युद्ध न करने में ही अपना हित समझा और उनका प्रस्ताव स्वीकार कर तुकोजीराव के साथ अकेले इंदौर आ गए। इंदौर में उन्होंने राघोबा का पारंपरिक तरीके से उचित स्वागत किया। रानी और राघोबा ने लंबी चर्चा की, लेकिन उन्होंने कुछ दिन पहले हुई कड़वी घटनाओं को भुला दिया। राघोबा लगभग एक माह तक इंदौर में रहे। उसी दौरान राघोबा को अहिल्याबाई के बारे में पता चला और वे उनके व्यक्तित्व से पूरी तरह प्रभावित हुए। उन्होंने दोबारा उत्तराधिकारी अपनाने के मुद्दे पर चर्चा नहीं की। अंतत: उनसे अलग होकर वह अपनी सेना के शिविर हटाकर पुणे लौट आए। अपने कृत्य से लज्जित होकर दीवान गंगाधर चन्द्रचूड़ भी तीर्थयात्रा के बहाने पुणे चले गये। इस प्रकार, रानी अहिल्याबाई ने

राज्य के प्रशासन पर प्रभावी पकड़ बना ली। उन्होंने अपने राज्य के अस्तित्व पर आए संकट का वीरता और चतुराई से सामना किया और हर तरफ से राज्य की रक्षा की। इस घटना से अहिल्याबाई की योग्यता और बुद्धिमत्ता की प्रतिष्ठा उनकी प्रजा और सम्पूर्ण मराठा साम्राज्य में और भी बढ़ गई।

रानी अहिल्याबाई ने चोरों, डाकुओं और लुटेरों का सफाया करके राज्य में शांति और कानून व्यवस्था बहाल कर ही दी थी। परन्तु, उनके राज्य के सीमावर्ती इलाकों में विद्रोह के बादल उमड़ने लगे। होलकर राज्य की सीमा राजस्थान के रामपुरा परगना से मिलती थी। रामपुरा, भानपुरा और इंदौर राज्य के गरोठ जिले को मिलाकर एक क्षेत्र बनता है, जिसे आज इंदौर राज्य का उत्तरी जिला कहा जाता है। यह जिला उत्तर में राजपूताना से घिरा हुआ है। रामपुरा को उदयपुर के एक राजकुमार ने चंद्रावतों की सहायता से आबाद किया था, जो 8वीं और 12वीं शताब्दी के बीच वहाँ बस गए थे। सन् 1759 ई. में जयपुर के राजा जयसिंह के पुत्र माधोसिंह ने सूबेदार मल्हारराव को सहायता देने के लिए रामपुरा को उन्हें सौंप दिया। चंद्रावत इस व्यवस्था से असंतुष्ट थे, लेकिन मल्हारराव की मजबूत शासन व्यवस्था के चलते कोई कदम नहीं उठा सके। सन् 1768 ई. के राज्य अभिलेखों के अनुसार, मल्हारराव की मृत्यु के बाद चंद्रावतों का असंतोष खुल कर प्रकट हुआ। अहिल्याबाई के शासन संभालने के तुरंत बाद, चंद्रावतों को 31 गाँवों का अनुदान देने का आदेश दिया गया, जो उनके सुलह की दिशा में एक नया कदम था।

सन् 1771 ई. में पेशवा द्वारा उत्तर भारत में एक बड़ा अभियान भेजा गया और सूबेदार तुकोजीराव को उसका साथ देना पड़ा। चंद्रावतों ने सूबेदार की अनुपस्थिति का लाभ उठाने की योजना बनाई उदयपुर के महाराणा ने चित्तौड़ तक कूच किया, जबकि होलकर सेना का एक बड़ा भाग दूर था। हालांकि, अहिल्याबाई ने बचे हुए सैनिकों को एकत्र कर अपने भरोसेमंद अंगरक्षक शरीफभाई के अधीन कर दिया और सेना ने युद्ध के लिए प्रस्थान किया। प्रारम्भ में सफलता नहीं मिली

परन्तु रानी ने अपने प्रयास जारी रखे और उनकी सेना ने पलसुडा में निर्णायक जीत हासिल की। रावत भीमसेन ने चित्तौड़ से संधि की शर्तें लिखीं और उन्हें स्वीकार कर लिया गया। लड़ाई की पूरी योजना और प्रबंधन देवी ने किया था। इस प्रकार, विद्रोह समाप्त हुआ, जिसमें पहले सुलह और बाद में हथियार, देवी के साधन थे। लेकिन यह शांति महज एक तूफान से पहले की शांति बनकर रह गई। रानी अहिल्याबाई की दूरदर्शी और मानवीय नीति को विरोधी पक्ष ने न तो समझा और न ही सराहा। उनकी दुर्भावना कम नहीं हुई थी। वह अवसर की प्रतीक्षा करता रहा। सन् 1787 ई. में राजपूतों ने लालसोट में सिंधिया की सेना को हराया, फिर उन्होंने निम्बेड़ा, जो होलकरों का एक परगना था, पर चढ़ाई की और जावद पर कब्जा कर लिया। शिवाजी नाना (परगना के सूबेदार) ने समर्पण कर दिया, जिससे चंद्रावतों को प्रोत्साहन मिला। इसके बाद, शत्रु सेना ने निम्बेड़ा पर अधिकार कर लिया। मालवा के अपने मामलतदारों[4] को एकजुट होने के आदेश के माध्यम से सिंधिया की सहायता सुनिश्चित की गई। देवी ने अपने भाई तुलाजी शिंदे को 5,000 घोड़ों के साथ तुरंत लालसोट भेजा और स्वयं युद्ध के मध्य पहुँच कर अपनी सेना का संचालन करने का निश्चय किया। मंदसौर के निकट भीषण युद्ध हुआ, जिसमें मालदा सम्वत- महाराणा के मंत्री मैदान पर गिर पड़े। कनेर और संदरी के ठाकुर घायल हो गए जिसके चलते संदरी के ठाकुर को कैद कर लिया गया। विजयी होलकर सेना फिर रामपुरा की ओर बढ़ी और उसे पुनः अपने कब्जे में ले लिया। रामपुरा में कड़ी सजा दी गई। चंद्रावत विद्रोहियों के नेता को तोप से उड़ाया गया और सौभाग सिंह गंभीर रूप से झुलस गया, जिसे मृत्युदंड दिया गया। उसका भाई भवानी सिंह बचे हुए सैनिकों को लेकर भाग गया। इस प्रकार पूर्ण विजय सुनिश्चित हो गई। युद्धभूमि में पहुँच अपनी सेना का संचालन कर रही रानी

4. **मामलतदार** - एक सरकारी अधिकारी, जो किसी जिले या तहसील में राजस्व और प्रशासनिक कार्यों की देखरेख करता है। वे भूमि संबंधी मामलों, कर संग्रह और अन्य प्रशासनिक जिम्मेदारियों का प्रबंधन करते थे।

अहिल्याबाई की वीरता और रण-कौशल की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। इस अवसर पर मराठाओं की राजधानी पूणे में एक भव्य दरबार का आयोजन किया गया, जिसमें नाना फडनीस ने रानी की वीरता और रण-कौशल की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। तब तक उन्हें केवल एक धर्मात्मा महिला के रूप में देखा जाता था, लेकिन अब वह एक वीर योद्धा एवं निपुण रणनीतिज्ञ के रूप में भी जानी जाने लगीं।

किसी भी शासक का राजनीति एवं युद्धनीति में निपुण होना, राज्य के कल्याण के लिए अति आवश्यक है। रानी अहिल्याबाई एक बुद्धिमान राजनैतिक होने के साथ-साथ एक निडर और निपुण योद्धा भी थीं। मालवा में लंबे समय तक शांति का कारण केवल रानी का कुशल प्रशासन ही नहीं, अपितु राज्य का सशक्त सैन्य शक्ति होना भी है। इतिहासकर प्राय: लोकमाता अहिल्याबाई को केवल एक पवित्र छवि वाली कुशल प्रशासिका एवं सनातन धर्म के पुनरुत्थान करने वाली रानी के रूप में ही प्रस्तुत करते हैं। परन्तु लोकमाता, इसके अतिरिक्त एक निर्भीक और साहसी योद्धा भी थीं जो आवश्यकता पड़ने पर अपने 'दुर्गा' रूप को उजागर करने में विलम्ब नहीं करती थीं।

पेशवा माधवराव प्रथम के नेतृत्व में मराठा क्षेत्रों का एकीकरण रानी के शासनकाल में ही संभव हुआ। पेशवा ने अहिल्याबाई के राजतिलक का समर्थन किया था क्योंकि वह उनके गुणों को पहचानते थे। रानी ने भी पेशवा की सेवा में अपने सर्वश्रेष्ठ सूबेदार, तुकोजी राव होलकर को नियुक्त कर उनके विश्वास का मान रखा। सूबेदार तुकोजी राव के नेतृत्व में होलकर सेना ने पेशवा के लिए कई युद्ध जीते जिसमें खरदा का युद्ध महत्त्वपूर्ण है। यह युद्ध लोकमाता के शासन के अंतिम दिनों में लड़ा गया। हैदराबाद के निजाम ने जब मराठाओं द्वारा कर वसूले जाने का विरोध किया तब खरदा के युद्ध में होलकर सेना, पेशवा के लिए वीरता से लड़ी और एक बड़ी विजय हासिल की। इस तरह, अपने शासन के अंतिम दिनों तक रानी अहिल्याबाई, पेशवा के प्रति अपना कर्त्तव्य सत्यनिष्ठा से निभाती रहीं। महादजी सिंधिया मराठा

संघ के एक महत्वपूर्ण व्यक्ति और रानी अहिल्याबाई के महत्वपूर्ण सहयोगी थे। एक शासक के रूप में उन्होंने सदैव ही लोकमाता के पवित्र व्यक्तित्व की प्रशंसा और कुशल प्रशासन का समर्थन किया।

धर्मार्थ कार्य

महारानी अहिल्याबाई का नाम समूचे भारतवर्ष में धर्मार्थ कार्यों का पर्याय है। उनके द्वारा किए गए विभिन्न मंदिरों, घाटों और धर्मशालाओं के निर्माण, जीर्णोद्धार और संरक्षण के कार्य राष्ट्रीय महत्व के हैं। इन में सबसे महत्त्वपूर्ण काशी विश्वनाथ का मंदिर है। औरंगजेब ने काशी विश्वनाथ मंदिर को ध्वस्त कर दिया था। विध्वंस के 108 वर्षों बाद अहिल्याबाई होलकर द्वारा सन् 1777 ई. में शिवरात्रि के दिन मंदिर के पुनर्निर्माण का संकल्प लिया गया। तीन वर्ष बाद महाशिवरात्रि के दिन ही मंदिर का निर्माण कार्य पूर्ण हो गया। शिवलिंग की प्राण प्रतिष्ठा की गई। ज्ञानवापी के बगल में दक्षिण का स्थान चुना गया जो स्कंद पुराण के काशीकांड में वर्णित कर्मकांड के अनुरूप था। समीप ही तुलसी घाट के नजदीक लोलार्क कुंड के चारों ओर कीमती पत्थरों से उसका जीर्णोद्धार करवाया गया। इसका उल्लेख महाभारत और स्कंद पुराण दोनों में मिलता है। मंदिर परिसर में प्रवेश करते ही दाहिने हाथ की ओर अहिल्याबाई की प्रतिमा स्थापित है।

12 वीं से 17 वीं शताब्दी तक तीन बार सोमनाथ मंदिर को विदेशी आक्रांताओं द्वारा तोड़ा गया। अहिल्याबाई सोमनाथ की जर्जर अवस्था को देख सदमे में आ गईं। उनके आदेशानुसार मंदिर का पुनः जीर्णोद्धार करवाया गया। संपूर्ण परिसर पुनर्निर्मित हुआ और सिंह द्वार और दालानों का निर्माण करवाया गया। अहिल्याबाई द्वारा निर्मित कराए गए मंदिर को 'पुराना सोमनाथ' या फिर 'अहिल्याबाई मंदिर' कहा जाता है जो मुख्य रूप से सोमनाथ मंदिर से 200 मीटर दूर स्थित है। ओंकारेश्वर में बावड़ियाँ बनवाई और महादेव के मंदिर में नित्य पूजन

की व्यवस्था की, मलेश्वर मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया। उन्होंने अयोध्या और नासिक में भगवान राम के मंदिर का निर्माण किया। अयोध्या में राम मंदिर, सीताराम मंदिर, भैरव मंदिर, नागेश्वर मंदिर अन्य मंदिर बनवाए। उज्जैन में चिंतामणि गणपति मंदिर, जो जनार्दन मंदिर, लीला पुरुषोत्तम बालाजी मंदिर, घाट, कुंड, धर्मशाला बावड़ियों का निर्माण कराया। आंध्र प्रदेश के श्रीशैलम और महाराष्ट्र में परली वैजनाथ ज्योतिर्लिंग का भी कायाकल्प किया।

अहिल्याबाई ने हंडिया, पैठण और कई अन्य तीर्थस्थलों पर सरायों (यात्रियों के रुकने हेतु) का निर्माण कराया। मध्य प्रदेश के धार स्थित चिकल्दा में नर्मदा परिक्रमा में आने वाले भक्तों के लिए भोजनालय की स्थापना की। सुलपेश्वर में उन्होंने महादेव के एक विशाल मंदिर और भोजनालय का निर्माण करवाया। मध्यप्रदेश के खरगोन स्थित मंडलेश्वर में उन्होंने मंदिर और विश्राम गृह बनवाए। मांडू में उन्होंने नीलकंठ महादेव मंदिर की स्थापना की। नाथद्वारा में मंदिर, धर्मशाला, कुआँ, कुंड बनवाएँ। चित्रकूट और ऋषिकेश में श्री राम मंदिर, पंढरपुर में श्री राम मंदिर, अपने जन्म स्थान चोधनी में श्री महादेव मंदिर त्रयंबकेश्वर में एक सुंदर तालाब, दो छोटे-छोटे मंदिरों का निर्माण करवाया शिवजी का चांदी का मुखौटा बनवाया। गया में विष्णु पद मंदिर के पास ही दो मंजिला मंदिर का निर्माण करवाया, जिसमें भगवान राम, जानकी, लक्ष्मण, हनुमान जी की मूर्ति प्रतिष्ठित की।

अहिल्याबाई ने कोलकाता से लेकर काशी तक एक सड़क भी बनवाई थी। इसके अलावा गर्मियों में स्थान-स्थान पर प्याऊ (जल वितरण) और सर्दियों में कम्बल वितरण उनकी तरफ से होता था। उन्होंने अपनी जन्मभूमि पर भी एक शिवालय और घाट बनवाया था। यह मंदिर अहिलेश्वर के नाम से जाना जाता है। पश्चिम क्षेत्र में प्रजा की सुलभता के लिए राजवाड़ा के अंदर राजवंश के कुलदेवता मल्हारी मार्तंड मंदिर में 12 ज्योतिर्लिंग स्थापित किए थे। रानी की स्मृतियों को संजोने के लिए श्रमिक क्षेत्र में श्रीमातेश्वरी अहिल्या शिव मंदिर का

निर्माण किया गया, जहाँ ज्योतिर्लिंगों पर चांदी चढ़ाई गई। अहिल्याबाई होलकर ने ज्योतिर्लिंग की स्थापना करने से पहले देशभर में धार्मिक यात्राएँ की थी। इसी दौरान वे 12 ज्योतिर्लिंगों की पिंडियाँ लेकर यहाँ आई और इन्हें स्थापित किया। यह मध्यप्रदेश का एकमात्र मंदिर है, जहाँ उन्हीं के हाथों से स्थापित 12 ज्योतिर्लिंग आज भी मौजूद हैं। उनके हाथों से विराजित शिवलिंग के दर्शन भी यहाँ होते हैं। बालू से निर्मित शिवलिंग पर स्वर्ण परत चढ़ाई गई है। उनकी मोहर, भाला, कटार, निशासन स्वर्ण छड़ी भी मल्हारी मार्तंड मंदिर में मौजूद है। इनका विजय दशमी पर विशेष पूजन होता है। इस मंदिर का दो करोड़ रुपये खर्च कर जीर्णोद्धार खासगी ट्रस्ट द्वारा 11 मार्च 2007 को किया गया था। खासगी[5] ट्रस्ट के अनुसार अहिल्याबाई होलकर ट्रस्ट के अधीन 246 धार्मिक संपत्तियाँ, जिनमें 138 मंदिर 18 धर्मशालाएँ 34 घाट, 12 छतरियाँ, 24 बगीचे में कुंड है। केदारनाथ की दुर्गम पहाड़ियों से लेकर समुद्र के किनारे रामेश्वरम तक अनेक पुण्य लोकहित की इमारत का निर्माण अहिल्याबाई होलकर ने करवाया।

अपनी प्रजा के कल्याण पर ध्यान केंद्रित करते हुए भी अहिल्याबाई ने धर्मार्थ कार्यों के लिए एक बड़ी राशि समर्पित की, जो एक सम्राट के रूप में उनकी व्यापक दृष्टि का प्रमाण है। इन दान कार्यों ने उन्हें एक कुशल रानी से भारतवर्ष के लोगों द्वारा पूजनीय लोकमाता के रूप में प्रतिष्ठित किया। सनातन धर्म में प्रबल आस्था रखने वाली, लोकमाता ने भारतवर्ष के सात शहरों (अयोध्या, काशी, मथुरा, काञ्ची, हरिद्वार, उज्जैन और द्वारका) और चारों कोनों में बद्रीनाथ से रामेश्वरम और सोमनाथ से जगन्नाथ पुरी धाम तक धर्मार्थ कार्य किए। होलकर परिवार समर्पित शैव यानी शिव-भक्त हैं, इसलिए लोकमाता अहिल्याबाई ने अधिकांश दान ज्योतिर्लिंगों या शिव मंदिरों को समर्पित किए। देशभर में फैले इन ज्योतिर्लिंगों को अहिल्याबाई द्वारा दिए गए दान से लाभ हुआ। अहिल्याबाई अपने राज्य की सीमाओं के बाहर जाकर संपूर्ण

5. **खासगी** - निजी संपत्ति, जिसे सार्वजनिक उपयोग की बजाय व्यक्तिगत या निजी उपयोग के लिए रखा गया हो।

भारतवर्ष में प्रसिद्ध तीर्थ मंदिरों अनेक स्थानों पर बावड़ी और धर्मशालाओं का निर्माण करवाने के कार्यों में जुट गई, मंदिरों में विद्वानों की नियुक्तियाँ करवाई गई, इसी कारण उनके जीवनकाल में जनता उन्हें देवी समझने और कहने लगी।

लोकमाता अहिल्याबाई के शासनकाल में मराठा साम्राजय पानीपत की हार के बाद फिर से एक महाशक्ति की तरह उभर रहा था और धीरे-धीरे भारतवर्ष में अपना वर्चस्व फैला रहा था। इस काल में लोकमाता अहिल्याबाई द्वारा किए गए इन कार्यों से सनातन के पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त हुआ। जहाँ एक ओर बाहरी आक्रांताओं के आक्रमणों से छिन्न-भिन्न हुए मंदिरों का पुनर्निर्माण और जीर्णोद्धार हो रहा था। वहीं दूसरी ओर यह कार्य आम जनता में अपने धर्म के प्रति नयी आस्था का संचार हो रहा था। यह लोकमाता की दूरगामी सोच का परिणाम ही है कि उनके द्वारा निर्मित और पोषित मंदिर एवं तीर्थस्थान आज भी भारतीयों की आस्था के केंद्र बने हुए हैं। इन सैकड़ों वर्षों में अनेकों बार शासन बदले, शासक बदले, शहरों के मानचित्र भी बदले, परन्तु आस्था और भक्ति के यह केंद्र सदैव सनातनियों के लिए महत्त्वपूर्ण रहे। ऐसा इसलिए संभव हो पाया है क्योंकि लोकमाता ने एक व्यापक सोच को आधार बनाते हुए एक ऐसे तंत्र का विकास किया जो सनातन धर्म के समग्र विकास में सहायक बन सके। उनके कार्य सिर्फ मंदिरों के निर्माण या जीर्णोद्धार तक ही सीमित नहीं हैं। उन्होंने श्रद्धालुओं को प्रोत्साहित करने के लिए ऐसी जगहों पर धर्मशालाओं, आश्रमों, कुँओं, घाटों, पुलों, सड़कों, अन्नक्षेत्रों और कावड़ों का निर्माण भी करवाया था। इस तरह तीर्थयात्रा सुगम बनी और तीर्थयात्री अब अधिक संख्या में यात्रा करने लगे। जो यात्राएँ कुछ शासकों की प्रतिकूल नीतियों की वजह से या तो स्थगित हो चुकी थीं या अति दुर्गम हो चुकी थीं। वह लोकमाता के प्रयासों से पुनः प्रारंभ हुई। इन यात्राओं का एक सकारात्मक प्रभाव भारतवर्ष के एकीकरण के रूप में आया।

अंतिम समय

सन् 1795 ई. में लोकमाता अहिल्याबाई 70 वसंत देख चुकी थीं। खरदा के युद्ध में होलकर सेना के पराक्रम के बाद रानी का कद मराठा संघ में और बढ़ गया था और राजकाज सकुशल चल रहा था। परन्तु प्रकृति के नियम के अनुसार श्रावण माह के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को पुण्यश्लोका लोकमाता अहिल्याबाई अपनी देह का त्याग कर पंचतत्व में विलीन हो गयी। परम शैव भक्त होने के नाते श्रावण के पवित्र माह में उनका देहत्याग उचित ही प्रतीत होता है। होलकर कैफियत में हमें इस घटना का विवरण मिलता है। संतजी होलकर जो सूबेदार के छोटे भाई थे वह लोकमाता के अंतिम क्षणों में उनके पास थे। लोकमाता अंतिम समय तक पूर्णतः चैतन्य थीं और किसी योगी की भांति बिना किसी व्यथा के उन्होंने अपना देहत्याग किया। वह अंत समय तक अपने इष्ट श्री शंकर का नाम जपती रहीं। अचरज की बात यह कि उनकी सबसे प्रिय गाय जिसके दर्शन से वह अपने दिन का प्रारंभ करती थीं, उसकी मृत्यु भी लोकमाता के देहांत के बाद उस ही दिन हुई।

लोकमाता के देहावसान के पश्चात लगभग 12000 लोगों को श्रावण के महीने में भोजन कराया गया और दान-दक्षिणा भी वितरित की गयी। समूचा राज्य शोकाकुल था। ऐसा ज्ञात होता है कि प्रजा ने शोक में उपवास रखा और भागवत जाप किया।

लोकमाता की मृत्यु के उपरांत, महेश्वर का शासन सूबेदार तुकोजीराव के जिम्मे आ गया। तुकोजीराव भी अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर थे और उनके दोनों पुत्र सिंहासन के लिए अपनी दावेदारी पेश कर रहे थे। इस वजह से मालवा राज्य उत्तराधिकार की कलह में उलझ गया। लोकमाता अहिल्याबाई के देहांत से उत्पन्न हुई रिक्तता को भरना असंभव था। उनके तीस वर्ष के लम्बे शासनकाल में सुख,शांति और समृद्धि देखने वाले मालवा ने उनके स्वर्गवास के बाद अराजकता

और अनिश्चितताओं का काल भी देखा। राज्य में लूटपाट फिर एक बार प्रारंभ हो गई थी और अंग्रेजों के संरक्षण में हैदराबाद भी अपनी हार का प्रतिशोध लेने की तैयारी में था। व्यापक तौर पर देखें तो यह एक ऐसा काल था जब शनैः शनैः मराठा शक्ति कई कारणों से क्षीण होती चली गयी। मालवा में उत्पन्न हुई यह परिस्थितियाँ, लोकमाता अहिल्याबाई होलकर के एक कुशल शासिका होने के महत्त्व पर प्रकाश डालती हैं। प्रायः उन्हें एक सादगी पसंद, धार्मिक कार्य करने वाली रानी के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, परन्तु उनका कुशल शासन और बुद्धिमत्ता न केवल मालवा परन्तु मराठा राजशाही के लिए अमूल्य थे।

उपसंहार

अपनी पुस्तक 'Devi Ahilyabai Holkar' में श्री मुकुंद बरवै लिखते हैं,"क्या एक शासक का 'रुआब' बिना किसी नैतिक आधार के कायम रह सकता है? क्या एक शासक मूल्यहीन होने के बावजूद प्रजा में आदरभाव जगा सकता है?" इन प्रश्नों का उत्तर हमें लोकमाता अहिल्याबाई होलकर के शासन का अवलोकन करने से मिलता है। नैतिकता और मूल्यों पर आधारित उनका शासन, समानता, समता और समरसता की एक अनूठी मिसाल कायम करता है। यही कारण है कि न केवल मालवा की प्रजा अपितु सारे राष्ट्र ने उन्हें लोकमाता का दर्जा दिया। जिस कालखंड में मानवाधिकार, लोक-कल्याण और सर्वपंथ समादर के उदाहरण कम ही देखने को मिलते हैं, उस समय रानी अहिल्याबाई ने समाज के शोषित, वंचित और निर्वासित वर्ग को मुख्यधारा से जोड़ने का विषम कार्य किया। सर्वप्रथम उन्होंने अपने दरबार को प्रजा में हर एक के लिए सुगम बनाया। मालवा का कोई भी निवासी, उनसे अपनी समस्या कह सकता था और समस्या के न्यायसंगत एवं शीघ्र निवारण की आस भी रखता था। तत्पश्चात अपनी

नीतियों से उन्होंने शोषित वर्ग का उत्थान किया। भूमिहीन कृषकों को कर में छूट प्रदान की और आवश्यकता पड़ने पर कर माफी भी की। बुनकर समुदाय को रानी ने ससम्मान सूरत से आमंत्रित कर महेश्वर में स्थापित किया और माहेश्वरी साड़ी के रूप में उनकी कला का सम्मान किया। भील समुदाय जो मुख्यधारा से निष्कासित था, उनके मुखियाओं को दरबार में बुलाकर, उन्हें अपनी भूमि पर अधिकार दिया और वहाँ से यात्रा करने वाले यात्रियों की सुरक्षा का दायित्व भी दिया।

नारी सशक्तिकरण हेतु उन्होंने कई नीतियों और कुरीतियों को खत्म किया। उन्होंने विधवा पुनर्विवाह पर जोर दिया। उस काल में संतान रहित विधवाओं की संपत्ति राज्य हड़प लेता था। इस नीति में संशोधन कर रानी ने ऐसी विधवाओं को अपना उत्तराधिकारी चुनने एवं संपत्ति पर पूर्ण अधिकार रखने का अवसर प्रदान किया। लोकमाता अहिल्याबाई ने जाति से अधिक महत्त्व योग्यता को दिया। उनके सबसे निकट सलाहकारों में से एक भारमल होलकर दासी पुत्र थे। परन्तु अपनी योग्यता के चलते वह रानी के सबसे विश्वासपात्र सेवकों और सलाहकारों में से एक बने। वह न सिर्फ राज्य की देखरेख में लगे रहते थे। अपितु रानी के निजी सेवक होने के नाते उनकी संतान का ध्यान भी रखते थे। समावेशी दृष्टि की धनी लोकमाता ने राज्य में रहने वाले मुसलमानों का भी विशेष ख्याल रखा। खंदेश में जन्मे शरीफ भाई, रानी के सबसे विश्वासपात्र सेवकों में से थे जिनका उनके दरबार में विशिष्ट स्थान था। राजकाज के विषयों में रानी प्राय: उनसे सलाह लिया करती थीं। चंद्रावत के युद्ध में वह स्वयं तुकोजीराव का संदेश लेकर रानी तक पहुँचे थे जिसकी रानी ने भरपूर सराहना की थी। इसके अतिरिक्त कई अवसरों पर लोकमाता ने राज्य में बसने वाले मुसलमानों को उनकी आवश्यकता के अनुसार भूमि और धन का अनुदान भी दिया। ये सारे उदाहरण हमें लोकमाता अहिल्याबाई की भेदभाव रहित, व्यापक सोच और समावेशी दृष्टिकोण से अवगत कराते हैं। उनके द्वारा किए गए विकास कार्य जाति, लिंग, धर्म और समुदाय से ऊपर उठ कर मानवतावादी थे। आज तीन सौ वर्ष बाद भी,

लोकमाता हम सभी के लिए प्रेरणास्रोत हैं; उनके द्वारा किये गए कार्य आज भी हमें समरसता और सहिष्णुता का पाठ पढ़ाते हैं, और सदैव यह प्रेरणा देते हैं कि कर्तव्य का मार्ग कितना भी दुष्कर क्यों न हो, बिना विचलित हुए आगे बढ़ते जाना ही कर्मयोगियों का धर्म है।

तालिका 1. ज्योतिर्लिंगों के लिए किए गए कार्य

द्वारा: वासुदेव. वी. ठाकुर, लाइफ एंड लाइफ'स वर्क्ऑफ श्री देवी अहिल्या बाई होलकर (1725-1795) : मॉडर्न प्रिंटरी लिमिटेड, इंदौर

क्र.सं.	मंदिर का नाम	भौगोलिक स्थिति	धर्मार्थ कार्य का विवरण
1.	श्री सोमनाथ	काठियावाड़, समुद्र के किनारे	1785 ई. में मूर्ति को पुनः स्थापित किया गया।
2.	श्री मल्लिकार्जुन	जिला कर्नुल मद्रास प्रेसीडेंसी	मन्दिर का निर्माण किया गया
3.	श्री ओंकारेश्वर	मध्य भारत (नर्मदा तट पर)	ढोल–नगाड़ों का घर, फूलों का बगीचा, पालकी वाली नाव, चाँदी की मूर्ति
4.	श्री वैजनाथ	निज़ाम का राज्य	1784 ई. में मंदिर का पुनर्निर्माण किया गया
5.	श्री नागनाथ	निज़ाम का राज्य	1784 ई. में पूजा के लिए 81 रुपये का वार्षिक भुगतान
6.	श्री विश्वनाथ	बनारस	मन्दिर का निर्माण किया गया
7.	श्री त्र्यंबकेश्वर	नासिक जिला	कुशावर्त–घाट का पुल
8.	श्री गिरीशनेश्वर	वेरुल निज़ाम का राज्य	शिवालय तीर्थ का पुनर्निर्माण किया गया
9.	श्री गोकर्ण	पश्चिमी समुद्र पर. मद्रास प्रेसीडेंसी	भिक्षा गृह
10.	श्री महाकालेश्वर	उज्जैन (मध्य भारत)	मन्दिर का निर्माण किया गया
11.	श्रीरामेश्वर	मद्रास प्रेसीडेंसी	भिक्षा गृह, कुआँ, राधा कृष्ण मंदिर
12.	श्री भीम–शंकर	बॉम्बे प्रेसीडेंसी	भिक्षा गृह

तालिका 2. सात महत्त्वपूर्ण नगरों में किए गए कार्य

द्वारा: वासुदेव. वी. ठाकुर, लाइफ एंड लाइफ'स वर्क्ऑफ श्री देवी अहिल्या बाई होलकर (1725–1795) : मॉडर्न प्रिंटरी लिमिटेड, इंदौर

क्र.सं.	शहर का नाम	भौगोलिक स्थिति	धर्मार्थकार्य का विवरण
1.	आयोध्या	संयुक्तप्रांत	1. श्रीराममंदिर 2. श्री त्रेताराममंदिर 3. श्रीभैरवमंदिर 4. श्रीनागेश्वरमंदिर 5. भिक्षा–गृह 6. श्री शरयु घाट 7. विश्रामगृह
2.	मथुरावृंदावन	संयुक्तप्रांत	1. चौनबिहारीमंदिर 2. चीर घाट 3. कालियादेहा घाट 4. विश्रामगृह
3.	माया(हरिद्वार)	संयुक्तप्रांत	1.कुशावर्त–घाट 2.विश्रामगृह
4.	काशी(बनारस)	संयुक्तप्रांत	मन्दिरों का निर्माणकरायागया
5.	कांची	पलारनदीपरमद्रासप्रेसीडेंसी	प्रतिवर्षभेजाजाताहैगंगा जल
6.	अवंतिका(उज्जैन)	मध्य भारत	1. श्रीलीलापुरूषोत्तममंदिर 2. श्रीजनार्दनमंदिर 3. श्रीबालाजीमंदिर 4. श्रीचिंतामनगणपति 5. विश्रामगृह
7.	द्वारका	काठियावाड़ (पश्चिमीसमुद्र)	भिक्षा–गृह

तालिका 3. अन्य स्थानों पर किए महत्वपूर्ण कार्य

द्वारा: वासुदेव. वी. ठाकुर, लाइफ एंड लाइफ'स वर्क्ऑफ श्री देवी अहिल्या बाई होलकर (1725–1795) : मॉडर्न प्रिंटरी लिमिटेड, इंदौर

क्र.सं.	नाम	भौगोलिक स्थिति	धर्मार्थ कार्य का विवरण
1.	श्री बद्रीनाथ	हिमालय	1. व्यास गंगा, 2. बेदार चट्टी, 3. रंगड़ चट्टी, 4. तांगा नाथ, 5. कुण्ड छतरी, 6. देव प्रयाग–उद्यान, 7. गर्म जल का कुंड, 8. कुंडचट्टी कुंड 9. श्री हरि मंदिर, 10. गौरी कुंड
2.	श्री जगन्नाथ	बंगाल प्रेसीडेंसी	1. श्री रामचन्द्र मंदिर, 2. भिक्षागृह, 3. उद्यान–भूमि
3.	चित्रकुट	संयुक्त प्रांत	श्री राम चंद्र और चार अन्य की मूर्तियां स्थापित की गईं
4.	पुष्कर	राजपूताना	भिक्षा गृह, गणपति मंदिर, उद्यान
5.	एलोरा	निज़ाम का राज्य	लाल पत्थर का मंदिर
6.	भरतपुर	राजपूताना	विश्राम गृह
7.	नाथद्वारा	राजपूताना	विश्राम गृह, मंदिर, कुआँ और कुंड।